विषय :→ संस्कृत [एम०ए० द्वितीय सेमेस्टर]

प्रमुख काव्यशास्त्रीय सिद्धान्त

शिक्षक → डॉ० विष्णु प्रसाद मीना

काव्यशास्त्र के प्रमुख सिद्धान्त →

संस्कृत काव्यशास्त्र के सम्प्रदायों के विषय में आचार्य राजशेखर ने अपने काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ "काव्यमीमांसा" में इस प्रकार वर्णन किया है -

एकत्वेऽपि परेशस्य विश्वधर्माविभेदवत् ।
साहित्येऽपि समुद्भूताः सम्प्रदायास्तु सप्तधा ॥

काव्यस्यात्मका रसः कैश्चित् कैश्चिच्चैव ध्वनिर्मतः ।
वक्रोक्तिर्गुण औचित्यमलंकारोऽथ रीतयः ॥

भरतो रससिद्धान्तमलंकारं च भामहः ।
गुणं दण्डी ततोऽभिन्नं रीतिमार्गं च वामनः ॥

कुन्तकश्चैव वक्रोक्ति ध्वनिमानन्दवर्धनः ।
अन्त्यमौचित्यसिद्धान्तं क्षेमेन्द्रः प्रत्यपादयत् ॥

प्राधान्यात् तत्र तत्रैषो मता एते प्रवर्तकाः ।
अन्यता भरतादौ तु दृश्यते सर्वसंकरः ॥

काव्यशास्त्रीय सम्प्रदायों के विषय में आचार्य अच्युतराय-शर्मन् 'मोडक' (१९वीं शती) ने अपने काव्यशास्त्र विषयक

"साहित्यसार" में निम्न प्रकार उल्लेख किया है:-

षट् सम्प्रदायाः शास्त्रेऽस्मिन् मन्यन्ते साम्प्रतं बुधैः।
तेषु सर्वेषु प्राधान्यं रसस्य भरतेरितम् ॥
अलंकारस्य प्राधान्यं भामहोद्भटरुद्रटाः।
दण्डी गुणानां रीतिनां वामनश्चैव मेनिरे॥
ध्वन्यालोककृदाचार्यैर्ध्वनिप्राधान्यमीरितम्।
विश्वनाथ जगन्नाथमम्मटाद्यैः समर्थितः ॥

इस प्रकार काव्यशास्त्र में छः सिद्धान्तों को ही प्रमुख रूप से मान्यता दी जाती है। इनमें से आचार्य भरतमुनि को रस सिद्धान्त का, आचार्य भामह को अलंकार सिद्धान्त, आचार्य दण्डी को गुण सिद्धान्त, आचार्य वामन का ~~गुण~~ रीति, आचार्य कुन्तक को वक्रोक्ति का, आचार्य आनन्दवर्धन को ध्वनि तथा आचार्य क्षेमेन्द्र को औचित्य सिद्धान्त का संस्थापक माना जाता है सभी आचार्य अपने-अपने सिद्धान्तों पर विशेष रूप से प्रमुखता देते है।

उपर्युक्त सिद्धान्तों या सम्प्रदायों का विवेचन यहां पर ~~हि~~ हम क्रमानुसार करेंगे जो निम्न प्रकार है→

1. रस सिद्धान्त

2. अलंकार सिद्धान्त

3. रीति सिद्धान्त

4. वक्रोक्ति सम्प्रदाय या सिद्धान्त

5. ध्वनि सम्प्रदाय या सिद्धान्त

Scanned with CamScanner

6. औचित्य सिद्धान्त

1 **रस सिद्धान्त →**

भारतीय काव्यशास्त्रीय परम्परा में रस एक रोचक विषय रहा है। तथा रस का काव्यशास्त्र में प्रमुख स्थान दिया गया है। रस निरूपण की अवधारणा अतिप्राचीन है और रस सिद्धान्त की स्पष्ट रूप से उद्भावना भी अन्य सिद्धान्तों की अपेक्षा प्राचीन है किन्तु रस के महत्त्व रसानुभूति तथा रस की संख्या के विषय में कुछ मतभेद आचार्यों में देखा जाता है इनमें अधिकाधिक आचार्य रस की महत्ता को स्वीकार करते हैं, किन्तु कुछ आचार्यों ने रस को मूल तत्त्व मानकर उसे काव्य की आत्मा के रूप में प्रतिष्ठित किया है तो कुछ आचार्य रस को अलंकारों में अन्तर्निहित करते हैं, तो कुछ आचार्य रस को रसध्वनि के रूप में इसकी उत्कृष्टता का निरूपण करते हैं। रस तत्त्व से सभी आचार्य परिचित तो है ही किन्तु कुछ आचार्य इसकी मूल सत्ता को स्वीकार करते हैं तो कुछ आचार्य काव्यशास्त्र के अन्य तत्त्वों के अन्तर्गत इसकी गौण सत्ता को स्वीकार करते है। रस एक आनन्ददायक तत्त्व है, रस से ही आनन्द-उपलब्धि होती है। रस सुखात्मक माना जाता है, इसलिए यह आनन्द प्राप्ति का आधार है। इस दृष्टि से तैत्तिरीय उपनिषद् की निम्न उक्ति उचित और उल्लेखनीय है —

"रसो वै सः रसह्येवायं लब्ध्वा आनन्दी भवति।"

अर्थात् परमात्मा जो है वे सुकृत है, सत्कर्म है। वह रस

ही है। उसी को प्राप्त करके जीवात्मा आनन्दमय होता है। परमात्मा रस रूप ही है और उसी रस से हमें वास्तविक आनन्द की प्राप्ति होती है।

इसी प्रकार आनन्द प्रदायक काव्यरस को ही ब्रह्मास्वादसहोदर कहा गया है। आनन्द प्रदान करना रस का ध्येय है। इस विषय में आचार्य विश्वनाथ कविराज की यह उक्ति उल्लेखनीय है –

"सत्त्वोद्रेकादखण्डस्वप्रकाशानन्द चिन्मयः।
वेद्यान्तरस्पर्शशून्यो ब्रह्मास्वादसहोदरः॥
लोकोत्तरचमत्कारप्राणः केश्चित् प्रमातृभिः।
स्वकारवद्भिन्नत्वेनायमास्वाद्यते रसः॥

इसी प्रकार आचार्य मम्मट भी काव्यशास्त्र का प्रमुख प्रयोजन आनन्द की प्राप्ति को ही मानते हैं और वे आनन्द प्राप्ति करने वाला प्रयोजन ही सकल प्रयोजन मौलिभूत है –

"सकल प्रयोजन मौलिभूतं समनन्तरमेव रसास्वादन समुद्भूतं विगलित वेद्यान्तरमानन्दमयं।

उपर्युक्त उद्धरणों से काव्यशास्त्र का प्रमुख प्रयोजन आनन्द प्राप्ति माना गया है, जिसकी पूर्ति रस के अभाव में नहीं हो सकती है। अतः काव्यशास्त्र में रस का बहुत ही अधिक महत्व आचार्यों ने माना है और काव्यशास्त्रीय आचार्यों ने रस को काव्य की आत्मा के रूप में प्रतिष्ठित किया है।

Scanned with CamScanner